भी होती है।

उस समय भी कई वैज्ञानिकों ने इन परिणामों की उपयोगिता पर संदेह व्यक्त किए थे। मसलन कहा गया था कि उन बंदरों को एक्सटेसी की जितनी खुराक दी गई थी, क्या इंसान उतनी मात्रा का सेवन करेंगे? इसी प्रकार से यह सवाल भी उठा था कि यदि इस प्रयोग के निष्कर्ष सही हैं तो एकाध इंसान तो ऐसा मिले जो कैंसर या पार्किन्सन रोग से पीड़ित हुआ हो। ऐसा कोई व्यक्ति था नहीं। कुछ वैज्ञानिकों ने यह भी कहा कि यदि एक्सटेसी के असर इस कदर भयानक हैं तो लोगों को इसका सेवन करने के तुरन्त बाद टपक जाना चाहिए।

बहरहाल उस समय शोधकर्ता जॉर्ज रिकॉर्टे ने लगातार अपने निष्कर्षों का बचाव किया था। उन्होंने कई तरह से यह भी समझाने का प्रयास किया था कि क्यों उनके आलोचक गलत हैं।

इस बीच दवा-विरोधी कार्यकर्ताओं ने भी अपनी मुहिम तेज़ कर दी थी। उन्होंने मांग कर डाली थी कि एक ऐसा कानून बनाया जाना चाहिए जिसके तहत उन क्लबों पर जुर्माना किया जा सके जो इन दवाइयों के उपयोग को नज़रअंदाज़ करते हैं।

सवाल यह उठता है कि किसी प्रचलित दवाई के बारे में इतना ज़ोरदार दावा करने से पहले किस तरह का अध्ययन ज़रूरी था? जब यह शोध कार्य *साइंस* पत्रिका में प्रकाशित हुआ था तब जाने-माने तंत्रिका वैज्ञानिकों ने इसकी कड़ी आलोचना की थी। इससे लगता है कि पत्रिका द्वारा इसकी प्रकाशन पूर्व समीक्षा सरसरी तौर पर ही की गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि *साइंस* जैसी प्रतिष्ठित पत्रिका ने इसे प्रकाशित करने में इतनी फुर्ती इसलिए दिखाई क्योंकि परिणाम सनसनीखेज थे।

कहने का मतलब यह नहीं है कि एक्सटेसी का दिमाग पर कोई असर नहीं होता। शायद यह असर ज़्यादा धीमा व बारीक है। कई अध्ययनों के परिणाम परस्पर विपरीत भी रहे हैं। इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि ऐसे मामलों में शोधकर्ता अपने प्रयोगों में निहित अनिश्चितता की सीमा को भी ज़ाहिर करें। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***

मंगल ग्रह की लाली का राज़

पिछले दिनों मंगल ग्रह चर्चा में रहा क्योंकि वह पृथ्वी के निकटतम आ गया था। वैसे भी आकाश में लाल-सा दिखने वाला मंगल चर्चा में रहता ही है। सवाल यह है कि यह ग्रह लाल क्यों है।

यह माना जाता रहा है मंगल पर उपस्थित पानी के कारण वहां की चट्टानों पर लगे ज़ंग की वजह से मंगल लाल नज़र आता है। मगर हाल ही में किए गए विश्लेषण से पता चलता है कि शायद यह व्याख्या सही नहीं है।

मंगल के पर्यावरण को प्रयोगशाला में निर्मित करके किए गए प्रयोगों से लगता है कि मंगल की लालिमा उसकी सतह पर लगातार गिर रहे उल्का पिण्डों की वजह से है। चूंकि बात पानी की उपस्थिति से जुड़ी है इसलिए यह सवाल भी उठ ही जाता है कि क्या कभी मंगल जीवन के अनुकूल रहा होगा या नहीं?

मंगल का लाल रंग लौह ऑक्साइड की वजह से है, इस बात को सभी स्वीकार करते हैं। अब तक खगोलशास्त्री यह मानते आए थे कि मंगल की चट्टानों में मौजूद लौह तत्व का आक्सीकरण पानी की मौजूदगी में ही हुआ होगा। यानी मंगल पर पानी होना चाहिए।

मगर नासा के वैज्ञानिक अल्बर्ट येन ने जब पाथफाइन्डर द्वारा मंगल से लाए गए नमूने देखे तो उन्हें उक्त निष्कर्ष पर शंका हुई। पाथफाइंडर के अवलोकनों से निष्कर्ष निकलता है कि मंगल की ऊपरी मिट्टी में वहां की चट्टानों की अपेक्षा कहीं अधिक लौह व मैग्नीशियम है। इसका मतलब है कि ये खनिज कहीं ओर से आए हैं। ऐसा लगता है कि मंगल पर लगातार उल्का पिंडों की बौछार से प्रति एक अरब वर्षों में उस ग्रह पर धूल की पांच से.मी. मोटी परत जमा हो जाती है।

अब देखना यह था कि क्या यह लौह तत्व पानी की अनुपस्थिति में भी लाल ऑक्साइड में तब्दील हो सकता है। इस बात की जांच के लिए अल्बर्ट येन ने धात्विक लौह को एक ऐसे वातावरण में रखा जो मंगल के वायुमण्डल के समान था। अब इस नमूने पर पराबैंगनी किरणों की बौछार की गई। इस दौरान तापमान शून्य से 60 डिग्री नीचे रखा गया। एक सप्ताह के अन्दर लौह ऑक्साइड बनना शुरू हो गया था।

येन ने अभी यह दावा तो नहीं किया है कि मंगल पर पानी नहीं है। उनका कहना है मंगल पर पाई गई गहरी घाटियां दर्शाती हैं कि कभी वहां पानी बहा होगा। मगर उनका कहना है कि इस पानी ने मंगल ग्रह को आकार देने में ज़्यादा भूमिका नहीं निभाई है।

इसके अलावा, एरिज़ोना राज्य विश्वविद्यालय के जोशुआ बैण्डफील्ड का कहना है कि मंगल ग्रह की स्थिति विरोधाभासी है। उनके दल ने हाल ही में विश्लेषण करके बताया है कि मंगल पर कहीं भी कार्बोनेट लवणों के भण्डार नहीं हैं जबकि यदि मंगल पर बड़ी-बड़ी जलराशियां होतीं तो कार्बोनेट के भण्डार मिलने चाहिए थे। बैण्डफील्ड का मत है कि यदि पानी है भी तो वह बर्फ के रूप में है और किसी समय पिघलकर बहा होगा और घाटियों का निर्माण करके फिर बर्फ के रूप में जमा हो गया होगा।

कुल मिलाकर इन नई खोजों ने मंगल पर पानी की उपस्थिति और जीवन की उत्पत्ति पर सवालिया निशान लगा दिया है। तो यह लाल ग्रह अभी चर्चा में रहेगा।

एक नई आवर्त तालिका में

डेलीव ने 1871 में तत्वों की एक आवर्त तालिका बनाई थी जिसमें तत्वों को उनके परमाणु भार के क्रम में रखा गया था। इस तरह रखने पर एक निश्चित अंतराल के बाद समान गुण वाला तत्व आता है। तब से आवर्त तालिका रसायन शास्त्र में अत्यंत उपयोग साबित हुई है और इसमें समय-समय पर संशोधन भी हुए हैं। सबसे प्रमुख संशोधन यह हुआ कि तत्वों को उनके परमाणु भार की बजाय परमाणु संख्या (तत्व के केंद्रक में प्रोटान की संख्या) के क्रम में जमाया गया।

मगर एथेन्स के जॉर्जिया विश्वविद्यालय के अध्यापक ब्रूस रेल्सबैक इस तालिका से खासे परेशान थे। वे भूविज्ञान पढ़ाते हैं और एक दिन जब वे आवर्त तालिका की मदद से छात्रों को प्रकृति में तत्वों का वितरण समझा रहे थे तो बहुत परेशान हो गए। प्रकृति में तत्वों का वितरण समझाने में उनके हाथों को काफी मशक्कत करना पड़ी थी क्योंकि मूल आवर्त तालिका में वे बहुत दूर-दूर थे। तो कक्षा से लौटकर वे एक नई तालिका बनाने में जुट गए।

धरती पर जो खनिज पाए जाते हैं वे तत्वों के

Li^{1+}	Ba^{2+}	B^{3+}	C^{4+}	N^{5+}	
Na^{1+}	Mo^{2+}	Al^{3+}	Si^{4+}	P^{5+}	S^{6+}
K^{1+}	Ca^{2+}	Sc^{3+}	Ti^{4+}	V^{5+}	Cr^{6+}
Rb^{1+}	Sr^{2+}	Y^{3+}	Zr^{4+}	Nb^{5+}	Mo^{6+}
Cs^{1+}	Ba^{2+}	La^{3+}	Hf^{4+}	Ta^{5+}	W^{6+}

आवेशित रूप (आयन) से बनते हैं। इन आयनों का व्यवहार मूल तत्व से भिन्न होता है। रेल्सबैक ने एक-से आवेश वाले आयनों को इस आधार पर समूहीकृत किया कि वे पृथ्वी पर कहां पाए जाते हैं। कुछ तत्वों के आयन धन आवेश युक्त होते हैं जबकि कुछ तत्वों के आयनों पर ऋण आवेश होता है। कई तत्व अलग-अलग आवेश वाले आयन भी बनाते हैं। जैसे गंधन के आयन 2 धनावेश युक्त, 4 धनावेश युक्त या 6 धनावेश युक्त हो सकते हैं।

भूवैज्ञानिक जानते हैं कि किसी भी खनिज पदार्थ के गुण (जैसे गलनांक, पानी में घुलनशीलता) उसके आयनों